बहादुर शाह ज़फर की शायरी में राट्रीय चेतना

डॉ0 समन ज़हरा ज़ैदी
अस्टिेंट प्रोफेसर, इतिहास विभाग
जी0एफ0 कॉलेज, शाहजहाँपुर
ईमेलः

सारांश

1857 ई0 के विद्रोह के स्वरूप के विषय में इतिहासकारों के अलग–अलग मत हैं। अंग्रेज़ी इतिहासकारों ने इसे केवल सैनिक विद्रोह की संज्ञा दी है। डॉ0 आर.सी. मजूमदार, एस. एन. सेन जैसे भारतीय इतिहासकारों ने भी इसको राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम नहीं माना जबकि उस समय के उर्दू अखबार, इश्तहार, पत्र तथा अनेक संस्मरण देशभक्ति की भावनाओं से ओत–प्रोत हैं। इस विद्रोह के नायकों में से एक अंतिम मुग़ल बादशाह बहादुर शाह ज़फर जोकि केवल एक देशभक्त मुग़ल बादशाह ही नहीं बल्कि उर्दू के प्रसिद्ध शायर थे। वह अपने वतन को महबूब की तरह मुहब्बत करते हैं तथा जिन्होंने कू–ए–यार (महबूब की गली) में जगह न मिल पाने की कसक के साथ अपने वतन से दूर रंगून में ही दम तोड़ दिया। ज़फर को इतिहास में सम्मान केवल इस बात के लिए नहीं मिला कि वह आखिरी मुग़ल बादशाह थे, बल्कि उससे अधिक इस बात के लिए मिला कि उन्होंने अपनी साहित्यिक प्रतिभा के माध्यम से उस समय के ज़ुल्म, तकलीफों तथा देशभक्ति को बेहतर तरीके से प्रस्तुत किया जोकि 20वीं शताब्दी के राष्ट्रवादियों के लिए आदर्श बन गयी।

आर.सी. मजूमदार तथा एस.एन. सेन जैसे भारतीय इतिहासकार मुग़ल साम्राज्य के अंतिम बादशाह तथा उन जैसे तमाम देशभक्तों के हृदय में छिपी राष्ट्रीय चेतना को महसूस नहीं कर सके जोकि अंग्रेज़ों से लड़ते हुए शहीद हो गये या फॉसी पर लटका दिये गये। इस विद्रोह में अनेक ऐसे देशभक्त भी शहीद हुए जिन्हें इतिहास में नाम और सम्मान नहीं मिला, जिसके वह हक़दार थे। अतः इस विषय में शोध की पर्याप्त संभावना है।

मूल शब्दः *शायरी, राष्ट्रीय चेतना, 1857 का विद्रोह, स्वतंत्रता संग्राम, देशभक्त, राष्ट्रवाद, अंग्रेज़, मुग़ल बादशाह।*

प्रस्तावना

1857 ई0 के विद्रोह के स्वरूप के विषय में इतिहासकारों में मतभेद है। के0 मालेसन, ट्रेवेलियन, लारेन्स तथा होम्स जैसे अंग्रेज़ी इतिहासकारों ने इसे केवल सैनिक विद्रोह की संज्ञा दी है। समकालीन कुछ भारतीय विद्वानों के विचार में भी यह एक सैनिक विद्रोह था। कुछ विद्वान

इसे 'ईसाईयों के विरुद्ध धार्मिक युद्ध' कहते हैं। कुछ लोग इसे 'पाश्चात्य तथा पूर्वी सभ्यता तथा संस्कृति के बीच संघर्ष' कहते हैं। कुछ अन्य लोग इसे अंग्रेज़ी राज्य को समाप्त करने के लिए हिन्दू–मुस्लिम षड्यन्त्र का नाम देते हैं। टी0आर0 होम्स जोकि एक अंग्रेज़ इतिहासकार था, उसने यहाँ तक लिखा कि यह 'बर्बरता तथा सभ्यता के बीच युद्ध' था।[1] संक्षेप में यह कह सकते हैं कि इस विद्रोह के स्वरूप के विषय में उतने ही मत हैं जितने की लेखक।

ब्रिटिश शासन के दौरान इस विषय पर लेखन, शोध या परिचर्चा सम्भव नहीं थी। इससे सम्बन्धित अनेक दस्तावेज भी जगह–जगह लोगों के पास दबे हुए थे। स्वतंत्रता के बाद भारतीयों को इस विद्रोह के विषय में जानने की जिज्ञासा जाग्रत हुई। इससे सम्बन्धित अनेक दस्तावेज (पत्र, अखबार, इश्तहार, विद्रोहियों के संस्मरण इत्यादि) सार्वजनिक होने लगे। स्वतंत्रता के बाद भारत सरकार द्वारा भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष का इतिहास लिखे जाने के लिए एक समिति बना दी गयी। डॉ0 आर0सी0 मजूमदार को इस समिति का प्रधान सदस्य बनाया गया। बाद में यह इस समिति से अलग हो गये। उन्होंने इस विद्रोह का विश्लेषण अपनी पुस्तक Sepoy mutiny and Revolt of 1857 में दिया है।[2] इसके अलावा उन्होंने अपने तर्को को उन अध्यायों, जो उन्होंने भारतीय विद्याभवन की पुस्तक British Paramountecy and the Indian Renaissance, Vol-IX के लिए लिखे, में और अधिक विस्तारपूर्वक स्पष्ट किया है। उनका कहना है कि यह विद्रोह स्वतंत्रता संग्राम नहीं था। इस विद्रोह ने भिन्न–भिन्न स्थानों पर भिन्न–भिन्न रूप धारण किया किन्तु यह एक महत्वपूर्ण तथ्य की ओर ध्यान दिलाते हैं कि इस विद्रोह का राष्ट्रीय महत्व अप्रत्यक्ष और उत्तरकालिक था। वह लिखते हैं कि यह कहा जाता है कि 'जूलियस सीज़र जीवित के स्थान पर मरा हुआ अधिक शक्तिशाली था।' यही बात 1857 के विद्रोह के विषय में भी कही जा सकती है। इसका वास्तविक स्वरूप कुछ भी क्यूँ न हो, किंतु शीघ्र ही यह भारत में अंग्रेज़ी सत्ता के लिए एक चुनौती का प्रतीक बन गया। यद्यपि डॉ0 आर0सी0 मजूमदार का मानना था कि यह तथाकथित प्रथम राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम न तो यह प्रथम, न ही राष्ट्रीय और न ही स्वतंत्रता संग्राम था।[3] किंतु 20वीं सदी के राष्ट्रवादी इतिहासकारों ने इसे वीर स्वतंत्रता सेनानियों का संघर्ष बताया जोकि स्वतंत्रता की प्रथम लड़ाई में परिवर्तित हो गया। अंग्रेज़ी दासता से स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए लड़ने वाले भारतीय राष्ट्रवाद के लिए यह एक ज्वलन्त उदाहरण बन गया तथा इसे अंग्रेज़ों के विरुद्ध 'राष्ट्रीय स्वतंत्रता संघर्ष का पूर्ण सम्मान प्राप्त हुआ।

वर्ष 2007 में इस विद्रोह की 150वीं वर्षगाठ मनाई गयी तथा इतिहासकारों में पुनः इस विद्रोह को जानने की जिज्ञासा जागृत हुई। इस दौर के उर्दू अखबार, इश्तहार, पत्र तथा संस्मरण देशभक्ति की भावनाओं से ओत–प्रोत हैं। समकालीन अखबारों में मौलवी मु0 बाक़र द्वारा सम्पादित 'देहली उर्दू अखबार' उस समय का सबसे क्रांतिकारी समाचार पत्र था। मौलवी मु0 बाक़र के लेख आज़ाद भारत की भावना से ओत–प्रोत थे, जिसके कारण ईस्ट इंडिया कम्पनी इनको अपने मुख्य शत्रुओं में शामिल कर चुकी थी। इस समाचारपत्र के 1857 के बाद के 16 प्रकाशन राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली में सुरक्षित हैं।[4]

इसी प्रकार इस विद्रोह के नायकों में से एक अंतिम मुगल बादशाह बहादुर शाह ज़फर

की शायरी भी देभभक्ति की भावना से ओत–प्रोत हैं। यद्यपि इतिहासकारों का मानना है कि उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक भारत में राष्ट्रवाद की चेतना केवल भ्रूण अवस्था के रूप में विद्यमान थी। बंगाली, पंजाबी, महाराष्ट्री इत्यादि लोगों ने कभी अपने आपको एक भारतवासी अथवा एक राष्ट्र का सदस्य नहीं समझा था।[5] किन्तु बहादुर शाह ज़फर की शायरी केवल बंगाली या पंजाबी नहीं बल्कि पूरे देश से प्रेम की भावना है।

बहादुर शाह ज़फर अंतिम मुगल बादशाह तथा उर्दू के प्रसिद्ध शायर (कवि) थे। 1857 के विद्रोह के दौरान विद्रोहियों ने उन्हें अपना नेता स्वीकार किया। इस विद्रोह में उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिसकी उन्हें भारी क़ीमत चुकानी पड़ी। अंग्रेज़ों ने ज़फर और उनके परिवार के सदस्यों पर जुल्म की सारी हदे पार कर दीं। उनके दो पुत्रों और एक पौत्र की ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा गोली मारकर हत्या कर दी गयी। तीनों शहज़ादों की लाशों को कोतवाली में दो दिन तक रखा गया। कुछ दिन बाद दो और शहज़ादों को मारकर उनकी लाशे नदी में फेंक दी गयीं।[6] शाही परिवार के 21 शहज़ादों को या तो फॉसी दे दी गयी या दूसरे तरीक़े से मार दिया गया।[7]

युद्ध में हार के बाद मेजर हडसन ने बहादुर शाह ज़फर को हुमायूँ के मक़बरे से गिरफ्तार कर लिया। एक अंग्रेज़ अधिकारी जोकि उर्दू का ज्ञान रखता था उनसे कहा–

''दमदमें में दम नहीं है खैर मांगों जान की, ऐ ज़फर ठंडी हुई अब तेग़ हिन्दुस्तान की।''

इस पर ज़फर ने उत्तर दिया–

''ग़ाज़ियों में बू रहेगी जब तलक ईमान की, तख्ते लंदन तक चलेगी तेग़ हिन्दुस्तान की।''

इस विद्रोह को पूरी तरह खत्म करने के उद्देश्य से अंग्रेज़ों ने मुगल बादशाह को देश से निर्वासित कर रंगून भेज दिया। बहादुर शाह ज़फर केवल एक देभभक्त मुगल बादशाह ही नहीं बल्कि उर्दू के प्रसिद्ध शायर भी थे। देश से बाहर रंगून में भी उनकी देशभक्ति की भावना से ओत–प्रोत उर्दू शायरी का जोश कम नहीं हुआ। वहाँ उन्हें हर वक़्त हिन्दुस्तान की फिक्र रही। उनकी अंतिम इच्छा थी कि वह अपने जीवन की अंतिम सास अपने वतन हिन्दुस्तान में लें और उन्हें वहीं दफ़नाया जाय, लेकिन ऐसा नहीं हो पाया–

''लगता नहीं है जी मेरा उजड़े दयार में,
किस की बनी है आलम–ए–नापायदार में।
बुलबुल को बाग़वा से न सैयाद से गिला,
किस्मत मे क़ैद लिखी थी, फसल–ए–बहार में।
कह दो इन हसरतों से कहीं और जा बसें,
इतनी जगह कहाँ है दिले दाग़दार में।
एक शाख गुल पे बैठ के बुलबुल है शादमाँ,
काँटे बिछा दिये हैं दिले लालाज़ार में।
उम्र–ए–दराज़ माँग के लाये थे चार दिन,
दो आरजू में कट गये दो इंतज़ार में।

दिन ज़िन्दगी के ख़त्म हुए शाम हो गई,
फ़ैला के पाँव सोएगें कुंज–ए–मज़ार में।
कितना है बदनसीब 'ज़फर' दफ़्न के लिए
दो ग़ज़ ज़मीन भी न मिली कू–ए–यार में।।

इतिहास में बहादुर शाह ज़फर जैसे कम ही शासक हुए हैं, जो अपने वतन को महबूब की तरह मुहब्बत करते हैं और जिन्होंने कू–ए–यार (महबूब की गली) में जगह न मिल पाने की कसक के साथ परदेस में ही दम तोड़ा। ज़फ़र की शायरी भावुक कवि की वजाय देशभक्ति के जोश से भरी रहती थी और यही कारण था कि उन्होंने अंग्रेज़ शासकों को तख़्ते लंदन तक हिन्दुस्तान की शमशीर चलने की चेतावनी दी थी। देश प्रेम के साथ–साथ ज़फ़र की ज़िन्दगी का एक सुन्दर पहलू उनकी शायरी थी। वह न केवल स्वयं एक अच्छे शायर थे बल्कि उन्होंने उस समय के प्रसिद्ध शायरों ग़ालिब, दाग, मोमिन और ज़ौक को तमाम तरह से प्रोत्साहित किया। इस समय खासकर मुग़ल सत्ता पूर्णतया पतन पर थी, लेकिन उर्दू साहित्य खासकर शायरी अपने चरम पर थी। ज़फ़र की मृत्यु के बाद उनकी शायरी ''कुल्लियात–ए–ज़फ़र'' के नाम से संकलित की गयी। दर्द में डूबी उनकी शायरी में मानव जीवन की गहरी सच्चाई और भावनाएं झलकती हैं। रंगून की क़ैद के दौरान उन्होंने बहुत सी गज़लें लिखीं। क़ैदी के तौर पर उन्हें क़लम तक नसीब नहीं थी लेकिन इससे उनकी भावनाऐं थमी नहीं बल्कि जली हुई तीलियों से उन्होंने दीवार पर गज़ले लिखीं। बाद में यह भारत के लोकगायकों के द्वारा गायी जाने लगीं–

गयी यक ब यक जो हवा पलट, नहीं दिल को मेरे क़रार है,
करूं इस सितम का मैं क्या बयाँ, मेरा ग़म से सीना फ़िगार है।
यह रिआऐ हिन्द तबाह हुई, कहो क्या–क्या इन पे जफ़ा हुई,
जिसे देखा हाकिमे वख़्त ने, कहाँ यह भी क़ाबिलेदार है।
न था शहर देहली यह था चमन कहो किस तरह का था या अमन,
जो खिताब था वह मिटा दिया फ़क़्त अब तो उजड़ा दयार हैं।

उनके शब्दों को सुनकर ऐसा लगता है जैसे कि उनमें दिल को छू जाने का जादू हो। उनकी साहित्यिक प्रतिभा क़ाबिले तारीफ़ है। उनकी ज़्यादातर ग़जलें ज़िन्दगी की कठोर सच्चाई और देशप्रेम से ओत–प्रोत है। कहा जाता है कि जूलियस सीज़र जीवित के स्थान पर मरा हुआ अधिक शक्तिशाली था। यही बात 1857 ई0 के विद्रोह तथा बहादुर शाह ज़फ़र के विषय में सही प्रतीत होती है। 20वीं शताब्दी के राष्ट्रवादियों ने 1857 के विद्रोह से प्रेरणा ली। प्रथम बार वी0डी0 सावरकर ने इस विद्रोह को ''भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम'' कहा तथा ''1857 का स्वतंत्रता समर के नाम से पुस्तक लिखी।[8]

हिन्दुस्तान से निर्वासन के बाद के पतन के दौर में अपनी तकलीफ़े बयान करने का बहादुर शाह ज़फ़र के पास एक ही माध्यम था और वह थी शायरी। देशप्रेम से ओत–प्रोत अपनी दर्द भरी शायरी के माध्यम से उन्होंने उस दौर के जुल्म और तकलीफ़ों को अमर कर दिया–

''मैं वह कुश्ता के मेरी लाश पर ऐ दोस्तों
एक ज़माना–ए–दीदा–ए–हसरत से तकता जाऐगा।
ऐ ज़फ़र क़ायम रहेंगी जब तलक अक़लीमे हिन्द
अख्तर इक़बाल इस गुल का चमकता जाऐगा।[9]

ना हम राहे वफ़ा भूले न तुम तर्जे सितम चूके
जो अपनी बात थी उससे न हम चूके न तुम चूके।

जो आ गया है इस महल तीरा रंग में
क़ैदे हयात से है वह क़ैदे फिरंग में

बादे सबा उड़ानी चमन में है सर पे खाक़
मिलते हैं दम व दम कफ़ अफ़सोस बर्ग ताक

क्या पूछते हो कजरवी चर्ख चम्बरी
है इस सितम शुआर का शेवा सितमगरी।[10]

बहादुर शाह जफ़र को इतिहास में सम्मान केवल इस बात के लिए नहीं मिला कि वह आखिरी मुग़ल बादशाह थे, बल्कि उससे कहीं अधिक इस बात के लिए मिला कि उन्होंने देश के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में एक प्रभावशाली भूमिका निभाई तथा अपनी साहित्यिक प्रतिभा के माध्यम से उस दौर के जुल्म, तकलीफ़ों तथा देशप्रेम की भावना को बेहतर तरीके से प्रस्तुत किया जोकि 20वीं शताब्दी के राष्ट्रवादियों के लिए आदर्श बन गयी। स्वतंत्रता के इस प्रथम संग्राम को अंग्रेज़ इतिहासकारों ने सैनिक विद्रोह कहा एवं भारतीय इतिहासकारों आर0सी0 मजूमदार तथा एस0एन0 सेन ने भी इसको स्वतंत्रता संग्राम नहीं माना। शायद यह इतिहासकार मुग़ल साम्राज्य के आखिरी बादशाह तथा तमाम उन देशभक्तों के हृदय में छिपी देशभक्ति की भावना को महसूस नहीं कर सके जोकि अंग्रेज़ों से लड़ते हुए शहीद हो गये या फाँसी के फंदों पर लटका दिये गये। इस विद्रोह में ऐसे बहुत से क्रांतिकारी भी शहीद हुए जिन्हें इतिहास में नाम नहीं मिला और वह आज भी गुमनाम हैं। इस विषय में शोध की पर्याप्त सम्भावना है।

सन्दर्भ ग्रंथ

1. बी0एल0 ग्रोवर, यशपाल– *आधुनिक भारत का इतिहास,* नई दिल्ली–2003, पृ0 **183–8**
2. R.C. Mazumdar – *The Sepoy Mutiny and the Rovolt of 1857*, Culcutta-1963
3. R.C. Mazumdar – *British Paramountcy and the Indian Renaissance*, Part-I, pp-**624-25**
4. Shireen Moosvi – *Rebel Journalism* (Delhi in 1857 Indian History Congress, Seventieth session 15-17 May-2010), pp-**33-34**

5. S.N. Sen – 1857, *Publications Division*, 1957, p-**360**
6. Col. E. Vibart – *The Sepoy Mutiny as seen by subaltern from Delhi to Lucknow*, pp-**149-50**
7. Madhu Prasad – *The Battle for Delhi* (Delhi in 1857 Indian History Congress, Seventieth session 15-17 May-2010), p-**50**
8. वी0डी0 सावरकर 1857 का स्वतंत्रता समर, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली।
9. Irfan Habib – *Remembering 1857* (Delhi in 1857, Indian History Congress, Seventh session 15-17 May-2010), pp-**21, 31**
10. Delhi in 1857 – *Indian History Congress,* Seventieth session 15-17 May-2010), pp-**126-129**